www.faithbook.in

Faithbook™
ACTIVITIES BEYOND BOOK

14th MAR 2021
Issue 11

BOOK 023

जब नासमझ थे,
तो ख्वाब हमारी मुट्ठी में बंद थे...
समझ आयी तो,
ख्वाबों ने हमें मुट्ठी में बंद कर लिया...!

॥ वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥
॥ पूज्याचार्य श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-राजेन्द्र-जयसुंदरसूरि सद्गुरुभ्यो नमः॥

प्रेरणा : पूज्य मुनिराज श्री युगंधर विजयजी म.सा. के शिष्य
पूज्य मुनिराज श्री शंत्रुजय विजयजी म.सा. के शिष्य
पूज्य मुनि श्री धनंजय विजयजी म.सा.

संपादक : नरेंद्र गांधी, संकेत गांधी

Team Faithbook
शुभ शाह, विकास शाह, केविन मेहता, विराज गांधी, नमन शाह

प्रकाशक : शौर्य शांति ट्रस्ट
C/O विपुलभाई झवेरी
VEER JEWELLERS, Room No. 10/11/12, 2nd Floor, Saraf Primeses Bldg., Khau Gully Corner, 15/19 1st Agyari Lane, Zaveri Bazar, Mumbai – 400003 (Time : 2pm to 7pm)
Mobile – 9820393519

संकेत गांधी – 76201 60095

Faithbook : 81810 36036 contact@faithbook.in

तत्वज्ञान की प्रभावना

सादर प्रणाम,

आज के इस दौर में लोगों को सुदेव-सुगुरु द्वारा प्रकाशित किये जाने वाले ज्ञान के बारे में हमारी अल्प बुद्धि के कारण अश्रद्धा, विपर्यास या भ्रम हो सकता है| किंतु अनुभव तो श्रद्धायुक्त, असंदिग्ध और निर्मल ही होता है| अतः ज्ञानीजन कहते हैं कि सम्यक् दर्शन के बाद ही ज्ञान निर्मल और भ्रम रहीत बनता है और वही ज्ञान 'सम्यक् ज्ञान' कहलाता है|

इसलिए गुरु भगवंतों द्वारा लिखित लेख सिर्फ तत्वज्ञान ही नहीं बांटते, किंतु विविध उदाहरण देकर उसका मर्म भी हम तक पहुंचाते है| Faithbook के नये अंक प्रस्तुत करते हुए हम आशा करते हैं कि आपके जीवन में सम्यक् ज्ञान की वृद्धि हो!!

– नरेंद्र गांधी, संकेत गांधी

INDEX

जीवन की बारहखड़ी 01
पू. आ. श्री अभयशेखर सूरिजी म.सा.

मैं राजनीतिज्ञ कृष्ण 05
पू. आ. श्री आत्मदर्शन सूरिजी म.सा.

त्रिकाल प्रस्तुत जीवन 09
पू. पं. श्री लब्धिवल्लभ विजयजी म.सा.

Everything is Online, We are Offline 5.0 11
पू. मु. श्री निर्मोहसुंदर विजयजी म.सा.

शहद से मीठा शब्द 14
प्रियम्

संगठन का प्राण : पारदर्शिता 18
पू. मु. श्री धनंजय विजयजी म.सा.

मेरी आचार-संहिता 22
पू. मु. श्री तीर्थबोधि विजयजी म.सा.

कर भला तो हो भला। 24
पू. मु. श्री कृपाशेखर विजयजी म.सा.

Temper : A Terror – 10 26
पू. मु. श्री शीलगुण विजयजी म.सा.

FaithbookOnline

You can Read our Faithbook Knowledge Book in English & Hindi on our website's blog Visit : www.faithbook.in

जीवन की बारहखड़ी

पूज्य आचार्य श्री अभयशेखर सूरिजी म.सा.

पिछले लेख में हम अनीति को टालने की बातों के बारे में सोच रहे थे। अनीति के विषय में एक अन्यधर्मी मेगेज़ीन में पढ़ी हुई कथा याद आ रही है।

एक अरबोंपति-खरबोंपति धनाढ्य श्रीमंत था। पूरा आस्तिक था। पुण्य, पाप, परलोक आदि सभी में दृढ़ श्रद्धावान था। यहाँ की विपुल संपत्ति का खुद को उतना उपयोग नहीं था। यह बहुत समझने जैसा है कि, खुद इतना हाथ-पैर मारकर कमा-कमाकर जो इकट्ठा करते हैं, उसमें से खुद के उपयोग में कितना आने वाला है? जीवन के लिए पैसा नहीं, पर पैसे के लिए जीवन है; ऐसा समझकर 25 करोड़, 50 करोड़, 100 करोड़; बढ़ाते ही जाओ, बढ़ाते ही जाओ; जैसे कि जीवन इसके लिए ही है। नया-नया बढ़ाने के प्लानिंग में ही रचे-पचे रहते हैं। इस तरह पैसे के पीछे जमकर पड़े हुए लोगों को यह जरूर सोचना चाहिये कि इस धन से मेरे उपयोग में कितना आयेगा?

संतानों को बारहखड़ी सिखायी जाती है। क से कमल, ख से खरगोश, ग से गणेश; पर पैसे के लिए जीने वाले इन भाग्यशालियों को खुद फिर से इस तरह सीखना चाहिये कि क से कमाई, ख से खाना और ग से गँवाना।

ठहरो! क से कमाई का मतलब पैसे की कमाई नहीं है। पैसे तो कमा लिए हैं। इन कमाये हुए पैसों के लिए मालिक के पास यह क, ख और ग ये तीन

विकल्प हैं। या तो कमाये हुए पैसे से सुकृत की कमाई कर लें, या 'ख' से कमाये हुए पैसों से खा लें, यानी अपने उपयोग में लें। और यदि इन दोनों में से कुछ भी नहीं किया, तो 'ग' यानी पड़े हुए पैसों को गँवा दो। पैसों के लिए इन तीनों के सिवाय चौथा कोई विकल्प नहीं होता है।

क, ख और ग, इन तीन में से 'ख' का क्षेत्र बहुत ही मर्यादित है। 10 करोड़ कमाने वाला 1 रोटी खाता है, 20 करोड़ का मालिक 2 रोटी खाता है, 30 करोड़ का मालिक 3-3 रोटी खाता है - ऐसा कोई नियम नहीं है। कईं बार तो इससे उलटा ही होता है। गुजराती भाषा में दो तरह से वाक्य प्रयोग किया जाता है। जो लोग खर्चे के जितना, या उससे सामान्यत: ज्यादा कमाते हों, उनके लिए कहा जाता है कि खा-पीकर सुखी हैं। पर जो लोग खर्च से कईं गुना ज्यादा कमाते हैं, उनके लिए कहा जाता है कि पैसे-टके से सुखी हैं, उनके लिए खा-पीकर सुखी हैं, ऐसा नहीं कहा जाता। इसका मतलब ऐसा हुआ कि वे खा-पीकर सुखी नहीं होते हैं।

वे अपनी संपत्ति का सौवां नही, हजारवां हिस्सा भी खा-पी नहीं सकते।

लियो टोल्स्टोय
एक तत्व विचारक थे।

लोगों को बोध मिले इस हेतु से उन्होंने बहुत साहित्य की रचना की। उनमें से एक कथा इस प्रकार है:

एक किसान था। उसके छोटा सा खेत था। जितनी पैदाइश होती थी उसमें से वर्ष भर का खर्चा निकल जाता था, पर बचता कुछ भी नहीं था। एक बार उसको योगानुयोग से बचपन का एक पुराना मित्र मिल गया। उसने इस किसान से पूछा:

'दोस्त! क्या करते हो?' किसान ने सारी बात बताई। किसान संतोषी था, इसलिए उसे शिकायत या दीनता जैसा कुछ भी नहीं था। पर मित्र ने उसके लोभ को उकसाया। 'अरे! कोई बचत भी करेगा या नहीं? ऐसा कैसे चलेगा? कल को हाथ-पैर अटक जायेंगे तब क्या खायेगा?'

'पर यार! ज्यादा कुछ पैदा ही नहीं होता है। भूखे थोड़ी ही रह सकते है?'

'देख! तुझे बड़ा खेत दिलाता हूँ। तू साईबेरिया चला जा, वहाँ मेरा एक मित्र जमींदार है। उसके पास बहुत सारी विशाल जमीनें हैं। मैं तुझे चिट्ठी लिखकर देता हूँ। तू चिट्ठी लेकर उसके पास चला जा। तू कहेगा उतनी जमीन वह तुझे दे देगा। उसमें जो ज्यादा पैदाइश होगी, उसकी बचत करना।

('जो हमारे कषायों को उत्तेजित करे ऐसी सलाह दे उसे वास्तव में मित्र कहेंगे याँ शत्रु? यह बात सबको शांति से सोचनी चाहिए।')

किसान का संतोष हिल गया, और लोभ ने मन पर कब्जा कर लिया। मित्र की चिट्ठी लेकर साईबेरिया पहुँच गया, जमींदार से मिला। सारी बात करके चिट्ठी दी। जमींदार ने कहा, 'देख! मेरे ये बंगले की कम्पाउन्ड वॉल के आगे तेरी नजर जहाँ तक पहुँचेगी, वहाँ तक मेरी ही जमीन है। तू ऐसा कर, कल सूर्योदय होने पर तुझे यहाँ से निकलना है और सूर्यास्त तक वापस इस दीवार पर आ जाना है। उस दरमियान तू जितनी जमीन पर चलेगा, वो सब तेरी।

किसान खुश हो गया। पूरी रात सुनहरे सपने देखने में निकाल दी। सुबह में जल्दी से उठकर तैयार हो गया। एक कंधे पर लगाया चाय का थर्मस और

दूसरे कंधे पर लगाया ब्रेड का लंच बॉक्स, और बराबर सूर्योदय पर 6:00 बजे चलना शुरू कर दिया, बल्कि दौड़ने लगा। उसे लगा कि यह लंच बॉक्स घड़ी-घड़ी पैरों के साथ टकराकर दौड़ने में विघ्न पैदा करता है, आज ब्रेड नहीं खाया तो भी चलेगा। उसने वह फेंक दिया। थर्मस भी पैरों के साथ टकरा रहा था, 'आज बिना चाय के दौडूँगा' ऐसा मन को समझाकर थर्मस भी रख दिया।

दौड़ता ही रहा, 11:00 बज गये, 12:00 बज गये, शाम को 6:00 बजे सूर्यास्त होने वाला था। 'अब मुझे return होना चाहिये' यह खयाल आ गया था। पर ऐसा चान्स फिर से नहीं मिलने वाला था। थोड़ी ज्यादा जगह aquire कर लेता हूँ, वापसी में थोड़ा ज्यादा तेजी से दौडूँगा। 5/7 मिनट और आगे दौड़ा (वास्तव में 10-15 मिनट का फर्क हो गया था।) लोभ तो अभी भी आगे बढ़ने को कहता था। पर मन को समझाकर वापस आया, और कंपाउन्डड की वॉल की ओर दौड़ लगायी।

3:00 बज गये, 4:00 बज गये, 5:00 बज गये। बहुत थकान होने लगी, पूरा शरीर दुखने लगा। सांस चढ़ने लगी। उधर गांव के लोगों को सारी बात पता चल गयी थी। यह किसान जमीन ले पाता है? इस जिज्ञासा से दूर-दूर से लोग आने लगे। वे सभी इस किसान को चढ़ाने लगे, 'भाई! अब एक ही घंटा बाकी है, अंतर बहुत ज्यादा है, थोड़ी गति बढ़ाओ। किसान ने बची-खुची ताकत भी काम पर लगाकर गति बढ़ाई।

अब आधा घंटा बाकी, अब 15 मिनट बाकी, भाई दौड़-दौड़, अब सिर्फ पाँच मिनट, अब दो ही मिनट। किसान जान की बाजी लगाकर दौड़ा। अब आधी मिनट, 15 सैंकंड, और ये सूरज डूब गया। उस समय किसान ने एक लंबी छलांग लगायी। पूरा जमीन पर लेट गया। और उसने हाथ की दोनों हथेलियों से कंपाउन्ड वॉल की बोर्डर को छू लिया। लोगों ने जय-जयकार किया। जमींदार को बंगले से बाहर बुलाया, 'देख भाई! इसने शर्त पूरी कर दी है। यह सारी जमीन आज से इसकी।' पर जमींदार ने देखा कि किसान के प्राण पखेरु उड़ गए थे। (शत्रु की सलाह मानने पर ऐसा ही अंजाम आयेगा ना?)

लोगों ने जमींदार से पूछा, 'अब क्या होगा?'

जमींदार बोला, 'अब क्या? अब तो ये मर गया! मैं किसे जमीन दूँगा?'

लोग,'पर वह इतना दौड़ा, फिर भी कुछ नहीं दोगे?'

जमींदार, 'नहीं, इसी जमीन में, मैं उसे पाँच फीट जगह दूँगा और उसमें उसकी कब्र बनाऊँगा।'

इतनी कथा सुनाकर लियो टोल्स्टोय ने सभी को पूछा,

"How much land does a man require?"

Family members - 3. बंगला 2,500 sq.ft. का, उसमें से परिवार के उपयोग में सिर्फ 500-700 sq.ft. आते हैं, बाकी के 2000 sq.ft. में Ego रहता है।

विवाह प्रसंगों में खाने की dish 2000 रु. की होती है, मेहमान 200 की भी नहीं खाते होंगे। बाकी का रसोईया, महाराज, वेईटरो के परिवारों को जाता है, यानी Ego खाता है।

एक बहुत ही बड़े उद्योगपति की श्राविका के अत्यंत आग्रह के कारण उनके farm house पर जाना हुआ। परिवार के सदस्य सिर्फ पाँच, खुद, श्राविका, बेटा-बहू और उनकी एक संतान। लेकिन इतना बड़ा area, सैंकड़ों नारियल, सुपारी, बादाम आदि के वृक्ष, विराट-विशाल निवासस्थान, विशाल farm house के maintenance के लिए नौकर-चाकरों का विशाल काफिला, BMW, लेम्बर्गिनी, रोल्सरोयस, फरारी, रेन्जर, अमर, मर्सिडीज, पोर्श - बड़ी-बड़ी महँगी 50 से ज्यादा गाड़ियाँ, इनमें से कुछ तो ऐसी कि उसे रोज drive करनी ही पड़े, वर्ना बिगड़ने लगे। ड्राइवरों को उस कार में रोज सैर करने को मिलता था।

इतनी सारी समृध्धियों का उपयोग मालिक को कितना? और नौकर-चाकर ड्राइवरों को कितना?

कितने सारे श्रीमंतो के farm-house, बंगले आदि हिलस्टेशनों पर होते हैं। खुद तो साल में दो-चार बार मुश्किल से जाते होंगे। वहां की शुद्ध हवा का आस्वाद लेने वाले तो नौकर-चाकर ही होते हैं। कभी-कभी weekend आदि में स्वजन मित्र होते हैं।

In short 'ख' का क्षेत्र बहुत ही limited है। बाकी के दो 'क' और 'ग' का क्षेत्र unlimited है। जो multi-millionaires अपनी संपत्ति से सुकृतों को नहीं साध लेते हैं, उनके 'क' का क्षेत्र भी बहुत limited या nil जैसा हो जाने से 'ग' का ही दबदबा रहता है। या तो संपत्ति उनको छोड़ के चली जाती है, या तो खुद संपत्ति को छोड़कर परलोक में रवाना हो जाते हैं।

पर जो लोग जरूरतमंद आदि में अपनी संपत्ति दे-देकर सुकृत साध लेते हैं, 'क' को बढ़ाते ही जाते हैं, उनकी वह 'क' संपत्ति अनेक गुना बढ़कर परलोक में Transfer हो जाती है।

वह आस्तिक धनाढ्य भी अपनी ज्यादा से ज्यादा संपत्ति को 'क' में डालना चाहते थे। वहाँ इतने गरीब लोग तो आते नहीं थे, इसलिए इस श्रीमंत ने एक नई Scheme राजा के समक्ष प्रस्तुत की।

जितनी भी लोन चाहिये हो, उनको उतनी लोन देंगे, शर्त सिर्फ इतनी है कि, लोन लेने वालों को इस भव में लोन वापस नहीं चुकानी है, लेकिन परलोक में इसकी पाई-पाई का ब्याज सहित सब कुछ भरपाई कर देना है। इस प्रकार का सत्तावार लिखाई पत्र भी कर देना है। उस जमाने के लाख रूपये की लोन देनी होती तो भी, वो लोन लेने वाला कौन है? कहाँ का रहने वाला है? लोन वापस कर सकेगा कि नहीं? इत्यादि कोई भी जाँच यह श्रीमंत नहीं करते थे। उनको उसकी जरूरत ही नहीं थी। इसलिए लुच्चे-लफंगे लोग भी आ-आकर लोन ले जाने लगे।

(इस प्रकार से आप लोन लोगे कि नहीं लोगे? ये अपने आपसे पूछ लेना। यदि जवाब में 'हाँ' आये तो समझ लेना कि होंठों पर आस्तिकता होने पर भी हृदय में तो नास्तिकता है।)

उनकी इस scheme की बात दूर-दूर तक के शहरों में फैलने लगी अब आगे क्या होता है? **यह बात आगामी लेख में...**

मैं राजनीतिज्ञ कृष्ण

पूज्य आचार्य श्री आत्मदर्शन सूरिजी म.सा.

मैं कृष्ण हूँ। मैं महाभारत के युद्ध का महासूत्रधार था, रामायण के राम की तरह ही उस समय मैंने सबसे सफल योद्धा के रूप में काम किया। परंतु मुझे पता था कि सेना को एक अच्छे योद्धा की नहीं पर अच्छे मार्गदर्शक की जरूरत है।

राम के पास लक्ष्मण, हनुमान, सुग्रीव आदि धुरंधर योद्धा थे, तो मेरे पास तत्कालीन श्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन तथा गदाधारी भीम जैसे अनेक महान योद्धाओं की सेना थी।

जब दुर्योधन और अर्जुन एक साथ मेरे पास मांगने आये, तब दुर्योधन ने मेरी सेना मांगी और अर्जुन ने मेरी - खुद की मांग की। साथ-साथ कुरुवंश के तत्कालीन बड़े बुजुर्ग भीष्म के समक्ष मैंने एलान किया था कि, युद्ध में मैं शस्त्र नहीं उठाऊंगा। मैं तो सिर्फ सारथी की भूमिका अदा करूंगा। और वास्तव में मैं सारथी की तरह केवल युद्ध में ही नहीं; अर्जुन के रथ की लगाम के साथ-साथ अर्जुन की भावनाओं की लगाम भी मेरे हाथ में रखकर पांडवों को विजयपथ पर ले गया।

मैं कृष्ण हूँ।

जरूरत पड़ी तब गीता का उपदेश देकर अर्जुन के मन में जो ग्लानि का उद्भव हुआ था; उसे दूर किया। तो साथ ही मौके पर कर्ण के ब्रह्मास्त्र को (एकाघ्नी शक्ति) घटोत्कच की ओर मोड़ दिया। और युद्ध के पलड़े को पांडवों की और झुका भी दिया। सभी जानते थे कि मेरे मार्गदर्शन के बिना भीम, द्रोण तथा कर्ण जैसे शूरवीरों से भरी हुई दुर्योधन की विशालकाय सेना को हराना पांड़वो के लिए आसान नहीं था।

मुझे यह कहना है कि सच्चा लीड़र वह नहीं होता जो अकेला सफलता प्राप्त करे। सच्चा लीड़र वह होता है जो सभी को साथ लेकर सफलता सिद्ध करता है। जो अपनी सफलता को सभी के साथ बाँट सकता हो। अस्तु।

महाभारत की कथा के केंद्र बिंदु के समान मेरे इर्द-गिर्द चारों और सारे पात्र वर्तुलाकार में घूम रहे हों ऐसी प्रतीति आपके मन पर हुए बिना नहीं रहती है।

मेरी माता देवकी थी और पिता वसुदेव थे। वसु-देव के पुत्र होने के कारण मैं वासुदेव कहलाया गया।

हर एक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के काल में चौबीस तीर्थंकर होते हैं। उसी तरह नौ वासुदेव, नौ प्रतिवासुदेव और नौ बलदेव भी होते हैं। मैं इस अवसर्पिणी का आखिरी वासुदेव था। वासुदेव के बड़े भाई को बलदेव कहते हैं। बलराम आखिरी बलदेव थे, और जरासंध आखिरी प्रतिवासुदेव था।

ऐसा नियम है कि प्रतिवासुदेव द्वारा प्राप्त किया हुआ सर्व साम्राज्य-संपत्ति आदि को प्रतिवासुदेव को जीतकर वासुदेव प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार से तीन खंडों का साम्राज्य जो जरासंध ने प्राप्त किया था, उसे जीतकर मैंने हासिल कर लिया, इसलिए मैं तीन खंडों का मालिक कृष्ण-वासुदेव कहलाया गया।

जो पक्का राजनीतिज्ञ हो और उसके साथ-साथ जो धर्मात्मा हो, वो कैसा होगा? वह आपको जानना हो तो महाभारत के मेरे पात्र को देख लेना।

धर्मात्मा को राजनीति खेलनी पड़े तब वह, हो सके तब तक युद्ध को टालने के लिए जितने संभव हो उतने उपायो को आजमाये बिना नहीं रहता। और फिर भी यदि युद्ध छिड़ जाये तो काया से कठोरता से युद्ध करने पर भी मन से तो उसकी हेयता का ही जाप करता है।

पांड़वो की ओर से दूत बनकर जब मैं धृतराष्ट्र और दुर्योधनादि की राज्यसभा में आया तब मैंने कौरवों को बहुत धैर्यपूर्वक पांडवों के साथ समाधान कर लेने के लिए समझाया था। आखिर में पांच पांड़वो को केवल पांच गांव देने की बात करके युद्ध को टालने की ही मेरी भावना थी। पर दुर्भाग्य से दुर्योधन पांच गांव देने के लिए भी सहमत नहीं हुआ। उसने कहा कि सूई की नोक जितनी भी भूमि

नहीं मिलेगी, जो पाना हो उसे युद्ध के मैदान में ले सकते हो।

दुर्योधन के इस युद्धज्वर को देखकर मैं उसकी राजसभा छोड़कर निकल गया, फिर भी युद्ध-निवारण के प्रयत्नों को नहीं छोड़ा।

मुझे रथ तक विदा करने आये हुए लोग जब वापस गये तब मैंने कर्ण का हाथ पकड़कर मेरे साथ रथ में बिठा दिया, क्योंकि मुझे पता था कि कौरवों का मूल्य कर्ण के कारण से ही है। यदि उसे हटा दिया जाये तो कौरव बिना एक के शून्य बन जायेंगे। इसलिए कर्ण को जो अज्ञात थी वैसी बातें मैंने की, लालच भी दिया। वो राधेय नहीं है पर कौन्तेय है, सूत नहीं पर क्षत्रिय है, पांडव है। युधिष्ठिर से भी बड़ा होने से राज्य का प्रथम अधिकारी है। बहुत सारी रहस्यभूत बातें की। कर्ण भी यह सब सुनकर आश्चर्यचकित हो गया। पर मैं उसे कौरवपक्ष से बाहर नहीं निकाल सका।

कर्ण अत्यंत कृतज्ञ था। जिस राधा ने उसे छोटे-से बड़ा किया, जिस दुर्योधन ने उसे अंगराज बनाया, जिगरी दोस्त बनाया, उनके प्रति कृतघ्न बनना तो कर्ण के लिए स्वप्न में भी संभव नहीं था। इसीलिए युद्ध न करने के प्रयास में मैं दूसरी बार भी निष्फल हुआ।

हाँ! मेरा मन करुणा से भी ज्यादा करुण था। युद्ध ना हो इसलिए, क्योंकि मैं धर्मात्मा था। प्रभु नेम का भक्त था, सम्यगदृष्टि था।

पर जब विपक्ष को (कौरवों को) युद्ध के सिवाय दूसरा कुछ चाहिए ही नहीं था, तब मेरा मन कठोर से भी कठोर हो गया। क्योंकि जिस तरह मैं धर्म-मर्मज्ञ था वैसे ही राजनीतिज्ञ भी था। बेशक, इस राजनीति में भी प्रजा को दुष्टों की एड़ियों तले रौंदने से बचाने की धर्मनीति गंभीरता से मेरी अंतरात्मा में पड़ी ही थी। पवित्र प्रजा का निकंदन तो नहीं ही निकलना चाहिये। उन पर दुष्टों का आधिपत्य बिलकुल इच्छनीय नहीं है। ऐसा हुआ तो प्रजा अपनी पवित्रता खो बैठेगी और उससे धर्मपुरुषार्थ खत्म हो जायेगा और योग्य आत्माओं की भी मोक्षप्रवृत्ति और मोक्षप्राप्ति मुश्किल बन जायेगी। ये सब टिकाये रखने के लिए प्रजा या समाज को अच्छा नेता या राजा मिलना ही चाहिये।

दुर्योधन के युद्धज्वर के कारण मैं युद्ध को नहीं टाल सका तब मुझ धर्मात्मा को भी राजनीति का आश्रय लेना ही पड़ा। और वह युद्ध के आखरी दिन तक रहा।

दुर्योधन फरार होकर तालाब में जाकर छिप गया तो उसका पीछा करके उसे खत्म करवा दिया।

उसके लिए भीम से जाँघ के ऊपर गदा मार देने की अनीति का संकेत भी मैंने ही किया था।

एक बार हार-जीत से ही निर्णय लेने का फैसला ले लिया, तो अब उसके खातिर जो कुछ भी करना पड़े – कूड़, कपट, मृषावचन वह सब कुछ कर गुजरना सोच लिया था। उसमें दया को, संदिग्धता को, असमंजस को कोई स्थान कभी भी नहीं देना है, यह मेरी राजनीति थी।

हाँ, उन सारी बातों में मेरे खुद के स्वार्थ की कहीं भी कोई बात नहीं थी। सिर्फ प्रजा से दुष्टों का आधिपत्य हटाकर सत्पुरुषों के आधिपत्य को स्थापन करने की ही बात थी।

यह मेरी निःस्पृहता कहो या मानसिकता, युद्ध की हवा में भी धर्म की - धर्मात्मा की छवि प्रकाशित हो रही थी।

बाकी, युद्ध तो युद्ध; संहार तो संहार ही है। कर्मों के बंधन की कथा के सिवा वहाँ और क्या देखने को मिलेगा?

राजनीति में चाणक्य को बहुत पीछे छोड़ दे; ऐसा मेरा पात्र है। दूरदर्शिता इतनी गूढ़ थी कि सामान्य इंसान समझ ही नहीं पाये।

धर्मक्षेत्र और राजक्षेत्र दोनों भिन्न-भिन्न क्षेत्र हैं। पहले में तमाचा मारने वाले के सामने दूसरा तमाचा खाने के लिए गाल आगे कर देने की बात है। जबकि दूसरे में तमाचे का जवाब तमाचे से ही देना चाहिये ऐसी स्पष्टत मान्यता है। मैं इन दोनों क्षेत्रों का संपूर्ण जानकार था। कूड़-कपट के सामने सरलता दिखाने की धर्मनीति को मैंने राजनीति के क्षेत्रमें दाखिल नहीं होने दी थी। बल्कि बहुत ही सख्ती से वैसे ही दांव खेलकर कूड़-कपट के दाँव को निष्फल बनाने की विशिष्ट (राज) नीति मेरे पास थी।

हाँ, धर्मात्मा के रूप का मेरा दूसरा स्वरुप भी अभिनंदनीय और अनु-मोदनीय है, वह अब पार्ट-2 में बताऊंगा।

मैं राजनीतिज्ञ कृष्ण...

त्रिकाल प्रस्तुत जीवन

पूज्य पंन्यास श्री लब्धिवल्लभ विजयजी म.सा.

माता त्रिशला रानी ने जब चैत्र शुक्ल त्रयोदशी की रात्रि में प्रभु के पार्थिव पिंड को जन्म दिया, उससे पूर्व प्रभु ने जन्मातीत तत्त्व को प्राप्त कर लिया था।

पराई चीजों को आधार बनाकर खड़े होने वाले अहंकार से पार हो चुके प्रभु, अस्तित्व के सारभूत आश्रय में उपस्थित हुए थे।

अब उनके शरीर का जन्म होगा, पर उनमें 'मैं' का जन्म नहीं होगा। प्रभु ने उस 'मैं' को प्राप्त कर लिया है, जिसका ना तो कभी जन्म होता है ना ही मृत्यु।

जिस 'मैं' को न 'मुझ' और न 'मेरे' की जरूरत है,

जिस 'मैं' के सामने कभी 'तू' खड़ा नहीं होता,

जिस 'मैं' को 'मैं' कहना नहीं पड़ता,

जिस 'मैं' को महसूस
करने में कोई श्रम नहीं
उठाना पड़ता,

जिस 'मैं' में प्रविष्ट
होने के बाद 'मैं' नहीं रहता।

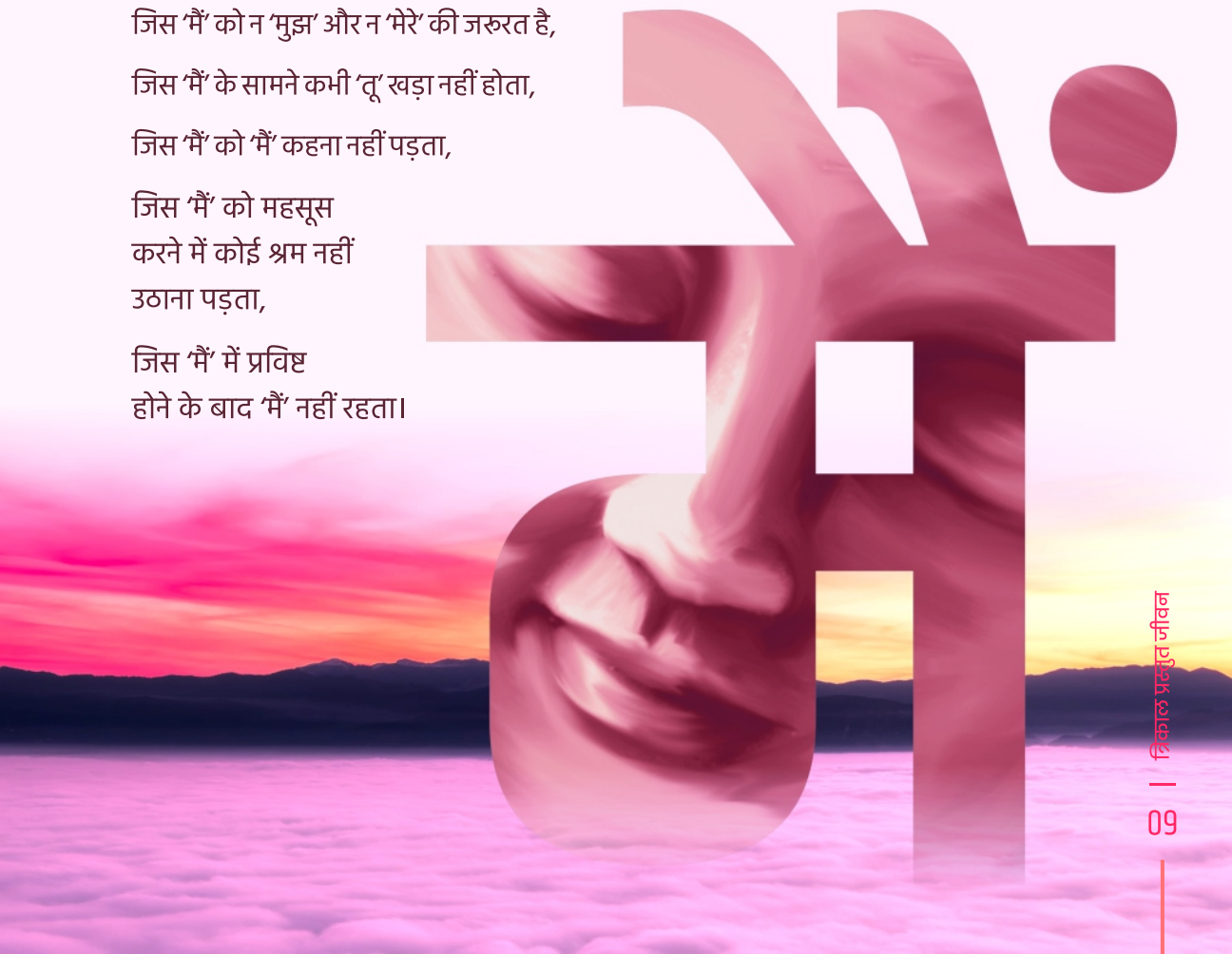

प्रभु अपने अन्तर्मत बिन्दु में स्थित हो गये थे।

जब व्यक्तिगत अस्तित्व का आशय मिट जाता है,

तब समष्टिगत अस्तित्व के साथ लय बनता है,

विश्व की ऊर्जा उन महापुरुषों के स्वागत में स्वत: रोमांचित हो उठती है।

विश्व के इस रोमांच के लिए जिनको तिलमात्र रोमांच न हुआ, वो प्रभु महावीर

वीतरागता प्रगट होने के पूर्व ही वीतरागतत्व के अनुभव में थे,

पुण्य का प्रचंड उदय जिनको अपनी घटना नहीं लगी, क्योंकि अपने जैसा कुछ रहा ही नहीं था।

रहा था अनुभव में सिर्फ अस्तित्व, जिसे बाजार में बताया नहीं जा सकता, प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुति उसकी होती है,

जिसकी उत्पत्ति हो।

बादलों की प्रस्तुति की जा सकती है,

आकाश की प्रस्तुति कैसे हो ?

आकाश तो सदा काल प्रस्तुत ही होता है।

जो कभी अप्रस्तुत होता हो उसी को ही

प्रस्तुत किया जाता है,

जो सदा प्रस्तुत ही हो उसे कैसे प्रस्तुत करें?

अस्तित्व त्रिकाल प्रस्तुत है।

लोग प्रस्तुति के माध्यम से जो प्रस्तुति होती है उसे जन्म कहते हैं, जीवन कहते हैं। ज्ञानी जीवन उसे कहेंगे जो त्रिकाल प्रस्तुत है।

त्रिकाल प्रस्तुत जीवन

Everything is Online, We are Offline 5.0

पूज्य मुनिराज श्री निर्मोहसुंदर विजयजी म.सा.

गत अंक में हमने 5G नेटवर्क के दुष्परिणाम बतायें थे, मगर कईं लोगों को प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि, यदि इतने सारे दुष्परिणाम है तो सरकार पूरे देश में 5G नेटवर्क की जाल क्यों बनाना चाहती है? इससे सरकार को फायदा क्या है? और सबसे बड़ा प्रश्न तो यह है कि, सरकार के शीर्ष स्थान पर बैठें राजनेताओं या संपन्न उद्योग-पतियों का इससे बचाव कैसे हो पायेगा, क्योंकि, 5G रेडिएशन के दुष्प्रभाव से तो वे लोग भी अछूते नहीं रह पायेंगे।

कोई भी इन्सान कितना भी लालची क्यों ना हो मगर मौत को गले लगाकर किसी भी तरह की सुविधा या भोगसुखों को भुगतना पसंद नहीं करेगा।

सभी प्रश्नों के उत्तर हम देना चाहेंगे, आप हम से जुड़े रहिए।

सबसे पहली बात यह है कि 5G नेटवर्क के इतने सारे दुष्परिणाम जानने के बावजूद सरकार इसे स्थापित करना चाहती है, इसमें 'सरकार' शब्द से 'विश्व सरकार' समझना चाहिए। अभी देश में बैठी हुई जो वर्तमान सरकार है वो तो 5/10 साल के लिये अस्थायी रूपसे बिठाई गई सरकार है।

उसके ऊपर बैठी सरकारें, इन्हें जो कहती है, वह इन्हें लागू करना होता है। मेरी बातों पर भरोसा ना बैठता हो तो, सन् 2021, 30 जनवरी के दिन संसद में मोदीजी के द्वारा दिए गये अभिभाषण को ध्यान से सुनने का जरूर कष्ट करें। New World Order (नूतन विश्व व्यवस्था) के बारे में उन्होंने जो कुछ थोड़ा बहुत संकेत दिया, उसके बारे में हमने धर्मप्रेमी संदेश नामक मासिक पत्रिका में अगस्त-2020 को ही बता दिया था (शायद (तब) कुछ लोगों को मेरी बातें हास्यस्पद लग रही थी और आगे जो बातें मैं बताने वाला हूँ वे बातें भी कुछ लोगों को असंभव लगेगी...)

प्रथम और द्वितीय प्रश्नों का संक्षिप्त में यदि उत्तर देना चाहें तो सरकारें कार्यपालिका के द्वारा 5G नेटवर्क स्थापित इसलिए करना चाहती है, कि समस्त प्रजा को अपने नियंत्रण में रखा जा सके।

गत अंक में हमनें 5G नेटवर्क के कारण होने वाले शारीरिक दुष्परिणाम बताये थे। इस अंक में हम आर्थिक क्षेत्र पर इसके क्या दुष्परिणाम पड़ सकते हैं, वह बताने की कोशिश करेंगें। शास्त्रों में हकीकत में वह बात 100 प्रतिशत सही लिखी है कि, पैसा (अर्थ) गृहस्थों के लिए 11वां प्राण है और यदि गृहस्थों को नियंत्रित करना हों तो उनके अर्थ (रुपयों) को अपने नियंत्रण में लेना पड़ता है।

बिना पैसों वाले गृहस्थों की इस संसार में कोई कीमत नहीं होती है, कोई भाव नहीं पूछता है, कोई उसकी राय नहीं लेता है, और अपने लोगों की नजरों से सिर्फ पैसे नहीं होने मात्र से वह गिर जाता है। इसी हेतु से नीतिशास्त्रों में जगह-जगह पर गृहस्थों को अपना धन सुरक्षित रखने हेतु टिप्स दी गई है। नीतिशास्त्र के अनेक संदेशों में से एक महत्वपूर्ण संदेश 'अपना धन अपने हाथ' रखने का है। अपना धन किसी औरों के हाथों में दिये जाने के बाद उसे अपना मानना बेवकूफी कहा गया है।

'गरथ गांठे विद्या पाठे'

यह गुजराती कहावत भी इस में गवाही दे रही है। यहां एक व्यक्ति की बात छोड़ो, मगर समस्त जनता के धन पर अपना नियंत्रण करना हो तो? रास्ता साफ है और उसी रास्ते पर अभी देश आगे बढ़ रहा है। आपने सन् 2008 में आई वैश्विक मंदी की बातें सुनी होगी। साथ में यह भी सुना था कि, भारत देश में उस मंदी की असर उतनी नहीं हुई, जितनी दूसरे देशों में हुई थी।

उस वक्त अमेरिका मंदी की चपेट में आने वाला और सबसे ज्यादा नुकसान करने वाला देश था। क्योंकि, सभी का धन बैंक में पड़ा था, और बैंक दिवालिया हो रही थी। भारत देश बच गया था, क्योंकि यहाँ की जनता के पैसे स्वयं के हाथों में थे, बैंक में नहीं थे।

इस भारत देश में भी अब धीरे-धीरे समस्त प्रजा को अपने कंट्रोल में लेने की कवायद शुरू हो चुकी है, हालांकि आतंकी एवं नक्सलवादियों की गतिविधियों को रोकने के लिए या अच्छा भी है, मगर सिक्के के जैसे दो पहलू होते हैं, वैसे इस प्रक्रिया का दूसरा पहलू भी है जो आपको जानना बहुत जरूरी है।

एक ऐसी माईक्रोचिप हरेक व्यक्ति के हाथों में यदि लगाई जाये कि, जिससे उनके सारे के सारे जीवन व्यवहार उसी से संचालित हो तो यह कैसा लगेगा? फिर आपको ना क्रेडिट कार्ड, ना डेबिट

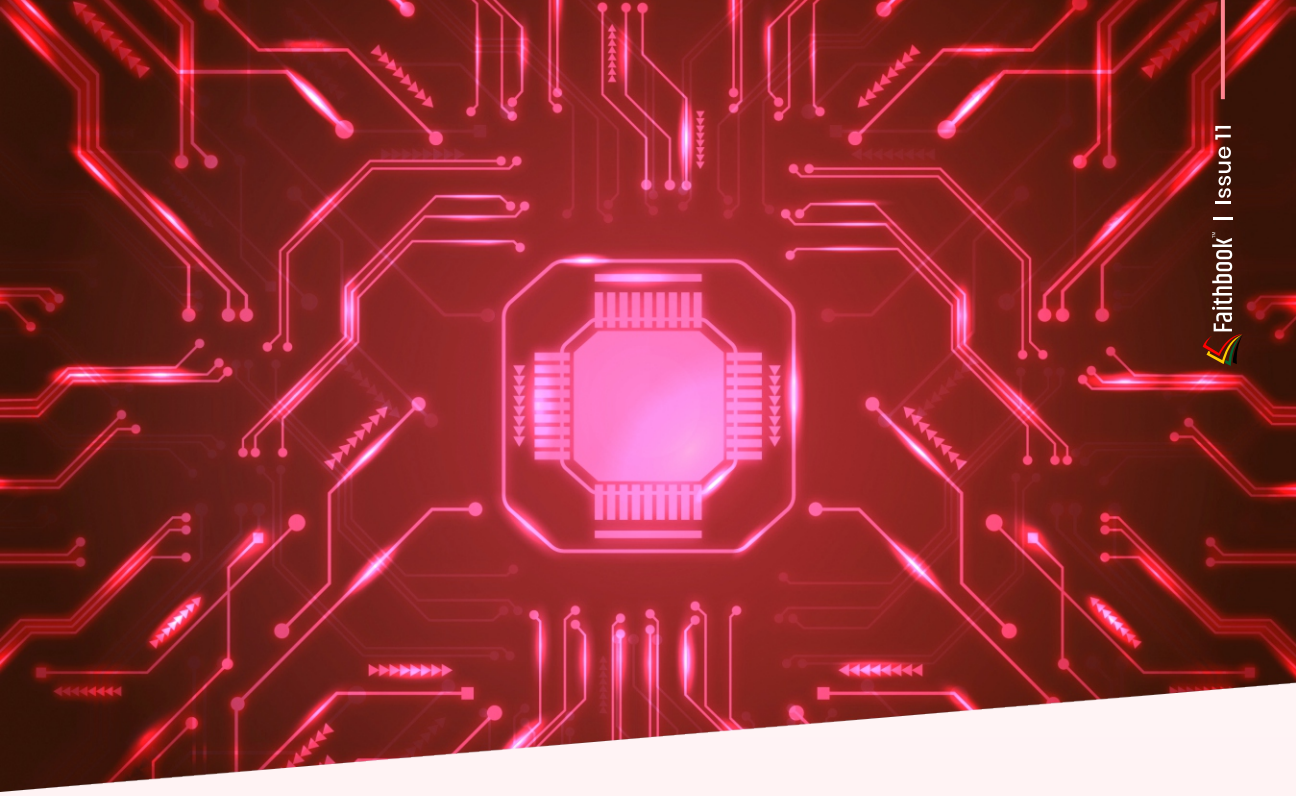

कार्ड, ना आधार कार्ड, ना राशन कार्ड, ना लाइ-सेन्स, ना अन्य कोई चीज़ रखनी पड़ेगी तो आप को वह चीज़ कैसी लगेगी?

जी हाँ, RFID चिप के बारे में मैं बता रहा हूँ, जो भविष्य के भारत में आने वाली है। रेडियो फ्रीक्वेंसी आईडेन्टीफिकेशन चिप को ही RFID चिप कहा जाता है, जिसकी शुरुआत ऑस्ट्रेलिया, स्वीडन, अमेरीका इत्यादि विकसित देशों में हो चुकी है।

सन्-2017 में ऑस्ट्रेलिया राष्ट्र अधिकृत रूप से माइक्रोचिपिंग करवाने वाला प्रथम राष्ट्र बन चुका है। अब तो चाईना इत्यादि में भी यह धड़ल्ले से चालू हो गया है, जिसके तहत हरेक नागरिक की बैंक अकाउंट की डिटेल उसी में रहती है और हरेक नागरिक अपने वित्तीय व्यवहार उसी के जरिये करने लगा है (या करने के लिये मजबूर किया जा रहा है।)

तर्जनी और अंगूठे के बीच वाले हिस्से में चावल के दाने जितनी छोटी माइक्रोचिप लगवाने के लिये छोटा सा ऑपरेशन करवाना होता है, जिसके पश्चात् आप अपना घर भी इसी उपकरण से लॉक-अनलॉक कर सकते हैं। बाहर शॉपिंग मॉल में खरीद-बिक्री इत्यादि सारे व्यवहार कर सकते हैं। इवन, आप अपने बच्चों को यह चिप लगवा कर उन पर भी नजर रख सकते हैं। आपका बेटा कहाँ जा रहा है? किसके साथ उठता-बैठता है? वहाँ पर क्या कर रहा है? वह सारी जानकारी आप दूर बैठे-बैठे भी प्राप्त कर सकते हैं, इत्यादि अनेक लाभ इस माइक्रोचिप से पा सकते हैं। ऐसा बताकर कईं लोगों को RFID लगवाने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ इसके नुकसान बताने से परहेज कर रही हैं जो हम बतायेंगे-

5G नेटवर्क, RFID चिप के लिये उपयुक्त भी है, अनिवार्य भी है अतः 5G नेटवर्क के लिये वर्तमान सरकारें उत्सुक भी है, लालायित भी।

आगे देखते है, RFID के नुकसान और संभावित लाभ क्या-क्या हो सकते है?

Heart Jinshasan

शहद से मीठा शब्द

"प्रियम्"

3 अक्षर /

श्री भगवतीसूत्र की एक घटना है। भगवान महावीरस्वामी गौतमस्वामी को कहते हैं कि, "गौतम! अभी खंदक परिव्राजक यहाँ आयेगा।" प्रभु के यह वचन सुनकर गौतमस्वामी प्रभु की इजाजत लेकर खंदक परिव्राजक को लेने जाते हैं।

जो गौतम स्वामी के सीनियर मुनि नहीं है, जो मुनि भी नहीं है, जो कोई उत्कृष्ट श्रावक भी नहीं है, और जो व्रतधारी श्रावक नहीं है। अरे, यहाँ तक कि जो जैन भी नहीं है। अरे, जो न्यूट्रल गृहस्थ भी नहीं है। जो दूसरे धर्म में दीक्षित है, उनको गौतमस्वामी सामने से लेने जाते हैं।

भगवतीसूत्र में गौतमस्वामी के उद्गार हैं, "सागयं हे!" खंदक आपका स्वागत है। "सुसागयं" आपका बहुत-बहुत स्वागत है।

सर्वलब्धिनिधान, प्रथम गणधर, चौदहपूर्वी - द्वादशांगीसर्जक, Next to महावीरस्वामी ऐसे गौतमस्वामी, अंदर से और बाहर से संपूर्ण समृद्ध ऐसे गौतमस्वामी एक जीव को धर्माभिमुख करने के लिए इतना झुक सकते हैं, तो हम तो बाहर से भी खाली और अंदर से भी खाली, फिर भी हम झुक नहीं सकते?

यही खंदक परिव्राजक प्रभुवाणी को हृदय में धारण कर खंदक अणगार बनते हैं। यही खंदक अणगार शास्त्रों के पारगामी बनते हैं। यही खंदक अणगार गुणरत्न संवत्सर तप करते हैं, और अपनी आत्मा का कल्याण साध लेते हैं।

इन सभी के मूल में गौतमस्वामी के तीन अक्षर हैं - "सागयं"। अक्षर तीन ही है, पर प्रेम से तर-बतर कर दे ऐसे हैं। वात्सल्य में भिगोये हुए हैं सामने वाले व्यक्ति के भावोल्लास बढ़े ऐसे हैं।

शहद या ज़हर

मैं आपको पूछता हूँ? दुकान में आये हुए ग्राहक के प्रति आप का बर्ताव कैसा होता है? घर पर आये हुए दामाद के प्रति आप का बर्ताव कैसा होता है? और संघ के स्थानों पर आए व्यक्ति के प्रति आपका बर्ताव कैसा होता है? आपके बर्ताव से यहाँ आए हुए व्यक्ति का उल्लास बढ़ेगा या टूटेगा? आपके शब्दों से उसकी संघ के प्रति भावना जगेगी या मृत: प्राय: हो जायेगी? आप का रवैया उसे रोज यहाँ दौड़कर आने का मन हो जाये ऐसा होता है? कि गलती से भी यहाँ पैर नहीं रखना है - ऐसा इगो-हर्ट करने वाला होता है?

मुझे कहने दीजिए कि, आप अधिकारी हो या अनधिकारी हो, कार्यकर्ता हो या ना हो, संघ के एक भी स्थान में आए हुए एक भी व्यक्ति को नीचा गिराना, उसका अपमान करना, उसे बुरा बताना ऐसा आपका कोई अधिकार नहीं है।

हमें शरम नहीं आती है? वह व्यक्ति संघ से दूर हो जायेगा, संसार के नजदीक हो जाएगा। वह पुण्य छोड़कर पाप करेगा, वह संघ के प्रति दुर्भाव लेकर जायेगा, वो मन में जिनशासन के प्रति अरुचि की गांठ बांध लेगा, वो दूसरे पाँच-पच्चीस लोगों के भावों को भी तोड़ डालेगा। यह दोष किसके सर पर?

भगवान होठ खोलते तो कह देते कि, 'भाई! पूरी जिंदगी मैंने जो इमारत बनाने का प्रयास किया था, उसे तू तोड़ने का प्रयास कर रहा है। पूरी जिंदगी मैंने जिनको तारने का प्रयास किया था, उनको तू डुबोने का काम कर रहा है। तू गलती से भी ऐसी गलतफहमी में मत रहना कि तू व्यवस्था कर रहा है। तू हकीकत में तूफान खड़ा कर रहा है। तू हकीकत में तोड़फोड़ कर रहा है। तू ऐसा काम कर रहा है कि जिससे यह देरासर, उपाश्रय, आयंबिल खाता, पाठशाला, व्याख्यान इन सभी का अर्थ ही नहीं रहेगा। अरे! अगर यह सब ना होता तो भी किसी को संघ के प्रति दुर्भाव होने की संभावना नहीं होती। वह व्यक्ति आराधना नहीं करता उतना ही होता, पर वह व्यक्ति द्वेष की गाँठ बांधकर आशातना तो ना करता।

खुद को विद्वान और स्वामी मानने वाले ठेकेदार संघ को तहस-नहस करने में कभी-कभी बड़ा हिस्सा रखते हैं। मैं कहता हूँ, मर जाना परंतु वहां आने वाले छोटे से बड़े, किसी भी व्यक्ति के साथ कभी भी अयोग्य बर्ताव मत करना। आप से अगर हो सके तो उसे प्यार से सहला देना। हो सके तो उसे बहुत-बहुत वात्सल्य देना। वह अगर हिच-किचाया तो सामने चलकर उसे सांत्वना और पीठबल देना। कुछ ना आये तो मौन रखना। मौन ना रह सको तो घर पर बैठना, पर संघ में आए हुए एक व्यक्ति की भी आशातना मत करना।

हमारे ग्राहक के साथ हम
शहद से भी मीठा व्यवहार करते हैं
और यहाँ आने वाले व्यक्ति पर गलती से
या बिना गलती से जहर की पिचकारी छोड़ेंगे
तो इसका अर्थ क्या है?

शास्त्र कहते हैं कि बाल जीव को तो भरपूर प्यार देना चाहिए। लेकिन इसके सामने टूट पड़ने और उसके ऊपर चढ़ बैठने के लिए हमें बाल जीव ही पसंद होते हैं। आप किस तरह से सही हो, यह सभी बातें ऊपर चढ़ा दो। यह बात अच्छे से समझ लीजिए कि आपकी यह पद्धति प्रभुद्रोह, शास्त्र-द्रोह और संघद्रोह है।

पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म. सा. की तबीयत ठीक नहीं थी। वंदनार्थी आते रहते थे और सभी को मिलने दिया जाये तो पूज्यश्री को बहुत परिश्रम होता। इसलिए शिष्य कभी-कभी किसीको पूज्य-श्री तक जाने नहीं देते, तो पूज्यश्री शिष्य को डांटते थे।

"भगवान ने उसे मेरे तक भेजा है और आप उसे वापस भेजेंगे? एसी अमैत्री करनी है?"

आप समझ लो कि संघ में आने वाले व्यक्ति विश्व की अरबों व्यक्तियों में सर्वोत्कृष्ट भाग्यशाली है।

आप समझ लीजिए कि संघ में आने वाले व्यक्ति अनंतानंत जीवों में मोक्षमार्ग के बिलकुल करीब आए हुए या मोक्षमार्ग को प्राप्त कर चुके व्यक्ति हैं।

आप समझ लो कि संघ में आने वाले व्यक्ति परमात्मा की अपरंपार कृपा पाए हुए व्यक्ति हैं।

यदि हम प्रभु के भक्त हैं, तो प्रभु के कृपापात्र के प्रति हम अयोग्य बर्ताव करेंगे तो कैसे चलेगा? यदि प्रभु के हम भक्त हैं तो हमारा Role प्रभु के भक्त बढ़ें उसमें होना चाहिए या कम हो जाये उसमें होना चाहिए? छाती पर हाथ रखकर हम अपने आपसे पूछेंगे कि मेरा बर्ताव पाँच-पच्चीस लोग संघ में आये ऐसा है या पाँच-पच्चीस लोग कम हो जाये ऐसा है?

नीतिशास्त्र कहता है, 'विचित्र स्वभाव का सेवक उसके स्वामी को अकेला कर देता है।'

श्राद्धदिनकृत्य ग्रंथ स्पष्ट कहता है,

विवायं कलहं चेव, सव्वहा परिवज्जए।
साहम्मिएहिं सद्धिं तु, जओ एअं विआहिअं।।

जो किर पहणई साहम्मिअंमि कोवेण दंसणम-यम्मि।
आसायणं तु सो कुणई, विक्किवो लोगबंधूणं।।

साधर्मिकों के साथ किसी भी तरह का विवाद और कलह करना ही नहीं चाहिए, क्योंकि कहा गया है कि जो साधार्मिक का गुस्से से अभिघात करे, वह निष्ठुर है। वो हकीकत में तीर्थंकर पर-मात्मा आशातना करता है।

जैन उसे कहते हैं, कि जो विश्व के किसी भी जीव का अपमान ना करे।

जैन उसे कहते हैं, कि जिसे विवाद और कलह करना आता ही ना हो।

जैन उसे कहते हैं, कि जो स्वप्न में भी किसी के साथ असभ्यता से बात ना कर सके।

जैन उसे कहते हैं जिसे पापी से पापी जीव पर भी हितबुद्धि हो।

क्या जैनी, जैन संघ जैसी परम पवित्र भूमि आए हुए पुण्यशाली व्यक्ति के साथ रुक्षता और उद्दंड व्यवहार कर सकता है?

संघ पर असली आक्रमण सरकार का या विधर्मी का नहीं है, असली आक्रमण अंदर के अभागी जीवों का है। पुण्यपाल राजा को स्वप्न आया था कि सिंह मृतप्रायः हो गया है।

सिंह को कौन मार सकता है? सिंह के सामने आँख उठाकर भी कौन देख सकता है? यह सिंह है कौन? भगवान जवाब देते हैं, "यह सिंह, यानी जिन-शासन। बाहर का तो कोई भी पशु उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता, परंतु अंदर के कीड़े उसे नोच-कर खा रहे हैं। उनके सामने यह सिंह लाचार है।"

मुझे कहने दो, कि विश्व की सर्वोत्कृष्ट शक्ति-स्वरूप जिनशासन को पाने के बाद इस शक्ति से हम हमारे कर्मक्षय करें, यह संभव भी है, और हम उस शक्ति को परास्त करें, थका दे और मरने तक के लिए मजबूर कर दे यह भी संभव है। बोलो क्या करना है हमें?

बनना ही हो तो संघ के सेवक बनना। संघ के कीड़े मत बनना, उससे तो अनंतकाल तक संघ की प्राप्ति होना मुश्किल हो जायेगा। आपकी दुकान के सारे ग्राहकों को धमकाकर निकालने पर आपका नुकसान कम होगा। पर यहाँ आए हुए एक भी व्यक्ति के साथ आपने स्नेह से बर्ताव ना किया, तो उसका नुकसान बेशुमार है। यहाँ आने वाले व्यक्ति के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करना भी एक प्रकार की शासनप्रभावना है। यहाँ आए हुए व्यक्ति के साथ रुक्ष व्यवहार करना भी शासन-अप्रभावना है। श्राध्धदिनकृत्य ग्रंथ कहता है:

साहम्मियाण वच्छल्लं कायव्वं भत्तिणिब्भरं।
देसियं सव्वदंसीहिं सासणस्स पभावणं।।

बहुत-बहुत भक्ति से साधर्मिक वात्सल्य करना चाहिए। केवलज्ञानी भगवंत कहते हैं कि, यह जिनशासन की प्रभावना है।

तम्हा सव्व पयत्तेण जो नमुक्कारधारओ।
सावओ सो वि दट्ठव्वो, जहा परमबंधवो।।

इसलिए जिसके पास नवकार से ज्यादा कुछ भी ना हो उस श्रावक को भी इस तरह देखना चाहिये जैसे कि वो परम स्वजन हो।

परम स्वजन के लिए हम कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं। परम स्वजन के पीछे हम सब कुछ कुर्बान करने तैयार हो जाते हैं। परम स्वजन के लिए हम सब कुछ सहन करने को तैयार हो जाते हैं। परम स्वजन जो करता है वह हमें अच्छा लगता है। परम स्वजन के साथ मनमुटाव, विवाद, अहं, ममत्व, दुर्व्यवहार आदि कुछ नहीं होता। और जब साधर्मिक ही परम स्वजन बन जायेंगे, तब क्या उनके साथ यही भूमिका नहीं आ जायेगी?

Vande Jinshasanam

Vande Shasanam

संगठन का प्राण : पारदर्शिता

पूज्य मुनिराज श्री धनंजय विजयजी म.सा.

अरिहंत के लोकोत्तर शासन की प्राप्ति को सफल बनाने हेतु 'संघभावना' पर निरन्तर रूप से स्वाध्याय करना चाहिए।

प्रभु वीर के शासन को 'संघ' कहा जाता है।

'संघ' अर्थात् समूह, संगठन, समुदाय।

किन्तु... यह अर्थ स्थूल रूप में (अर्थात् सामान्य रूप से) किया गया है।

'संघ' यह विश्व की एक ऐसी शक्ति है कि जिसकी तुलना में आने के लिए यदि विश्व के सभी धर्म एकत्र हो जाए, और उन सबकी जो विशेषताएँ हैं उनका गुणाकार किया जाए तो भी वे सब 'संघ' के सामने धूल के बराबर हैं।

किन्तु महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, 'इस संघ भावना को किस प्रकार बनाए रखें ?'

तो इस प्रश्न के उत्तर के रूप में यह लेखमाला चल रही है।

संघ भावना के लिए Unity चाहिए।

U = Understanding

N = No Negatives

I = Involvement

और अब बात कर रहे हैं...

"T = Transparency"

इस Transparency के 3 महत्त्वपूर्ण पहलुओं को देखते हैं।

01

Transparency in Opinion

संघ या संगठन खूब अच्छी तरह से चलते हैं। संस्था, मंडल या समूह अत्यन्त सक्रिय होकर बहुत से अच्छे कार्यों को साकार करते हैं, परन्तु इसके बावजूद भी इन संस्था, मंडल, समूह या संगठन में से दूसरी कोई संस्था इनके समक्ष खड़ी हो जाती है, और इसका कारण है 'Difference of opinion'।

दो हठधर्मियों के मत जब भिन्न-भिन्न प्रस्तुत होने लगते हैं तब मतभेद और मनभेद आने लगते हैं, तत् पश्चात् इस मत-भिन्नता का परिवर्तन 'अहम् या खोखली प्रतिष्ठा अर्थात् Ego' में तब्दील हो जाता है तब संघ, संस्था, मंडल, समूह या संगठन इत्यादि खंडित हो जाते हैं, एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं।

इसमें सब से पहली और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, अपने व्यक्तिगत विचार, मत या अभिप्रायों को सबके ऊपर जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए। उन विचारों को व्यक्तिगत ही रहने दें, उन्हें सार्वजनिक बनाने की कतई चेष्टा न करें!

क्योंकि जब भी आप अपने मत या विचारों को संघ या संस्था के मत वा विचारों में तब्दील करने का आग्रह रखते हैं तब विवाद का सृजन होने लगता है, अखण्डता खण्डित होने लगती है।

व्यक्तिगत विचार और संस्थाकीय विचार यह दोनों भिन्न ध्रुव हैं, यह आपके जहन में स्पष्ट होना चाहिए।

आप जिस किसी का अनुकरण करते हैं उनके नियमों को जब आप संस्था या संघ के नियमों में तब्दील करने की ज़िद पर अड़े रहते हैं तब से संघ विभाजन का आरम्भ होता है।

पूज्यपाद गीतार्थमूर्धन्य गच्छाधिपति गुरुमाँ श्री जयघोषसूरीश्वरजी महाराजा का ऐसा फरमान था कि "जो संघ में अपने मताग्रह के लिए विवाद उत्पन्न करके अशान्ति का निर्माण करते हैं और संघ विभाजन का जघन्य पाप करते हैं, उन्हें भवान्तर में जिनशासन की प्राप्ति नहीं होती, वे दुर्लभबोधि बनते हैं।"

और यह कोई सामान्य बात नहीं है, खतरे की घंटी के समान है।

इसलिए सतर्क हो जाएँ! संघ में वाद-विवाद करने वालों! अपने गुरुओं के मत-सिद्धान्तों के नाम पर संक्लेश उत्पन्न करने वालों! (भ्रामक) सत्य के नाम पर संघ में असमाधि उत्पन्न करने वालों! सावधान!!!

02

Transparency in Character

संघ, संस्था, मंडल, समूह या संगठन में कार्यरत व्यक्तियों को अपने चरित्र को हाथी के दाँत के जैसा नहीं रखना चाहिए।

मन में अलग, वचन में अलग, और काया (वर्तन) में अलग।

नहीं... ऐसा कदापि नहीं चलेगा!

ऐसा करने से विश्वासघात होता है। अपने कुछेक काम निकालने के लिए ऐसा कपट करने की सख्त मनाही है।

"धम्मे माया नो माया ॥" अर्थात् धर्म के लिए की गई माया, माया नहीं होती।

यह सूत्र धर्म की रक्षा आदि के प्रसंग पर विचारणीय है। उसमें भी गीतार्थ अथवा गीतार्थ निश्रित व्यक्तियों के लिए ही, सबके लिए यह सूत्र नियत नहीं है।

केवल अपना अहम्, झूठी दांभिकता के संरक्षण हेतु, अपना प्रभाव दिखाने के लिए अथवा कोई व्यक्तिगत कार्य को अंजाम देने के लिए माया कतई न करें!

'विश्वास' संघ का महत्त्वपूर्ण परिबल है, संघ की नींव है।

माया से क्षणिक् रूप के लाभ अवश्य प्राप्त कर सकते हैं किन्तु यदि विश्वास रूपी श्रद्धा पर आघात हो गया तो उससे संघ का भविष्य जोखिम में आ जाता है।

इसलिए जो है उसे स्पष्ट रखें, पारदर्शी रखें!

विचार, उच्चार और आचार में किसी भी प्रकार का अन्तर ना रखें, इसके फलस्वरूप बचे हुए शेष विश्वास से संघ-संस्था में प्राण-ज्योति प्रज्वलित हो सकती है।

03 Transparency in Account

संघ-संस्था की बड़ी-बड़ी पेढी-office में बहुत बड़े-बड़े व्यवहार, लेन-देन और कारोबार होते हैं।

किन्तु कहीं-कहीं ऐसा भी होता है कि गीतार्थ गुरु के मार्गदर्शन के बिना अपने मन में आए ऐसा कारोबार करने से हिसाब में फर्क आ जाता है।

और कहीं-कहीं अधिक आवक होने से वहाँ पर किसी को किसी बात की परवाह नहीं होती, 'यहाँ पर सब चलता है... यहाँ ऐसे ही चलता है...' जैसे प्रवृत्तियाँ नित्य हो जाती हैं।

हाँ, लेकिन सभी जगह पर ऐसा ही होता है ऐसा बिल्कुल नहीं है।

बहुत से संघ-संस्थाओं में ऐसे भी ट्रस्टी देखे हैं कि जो सभी खातों के हिसाब, व्यवहार अपने मुख पर कंठस्थ रखते हैं, बस उन्हें पूछने का अवकाश है, चुटकी भर में वे सब हिसाब पेश कर सकते हैं।

जिनशासन के सात क्षेत्र - अनुकम्पा, जीवदया आदि की द्रव्य व्यवस्था शास्त्रों में वर्णित है।

उन-उन खातों के व्यवस्थापकों को अथवा देख-रेख करने वालों को अत्यन्त सतर्कता रखते हुए उस द्रव्य का यथायोग्य उपयोग उसी खाते के कार्यों के लिए ही हो ऐसी कड़क नीति एवं सूक्ष्मदृष्टि से ध्यान रखना चाहिए। संघ-संस्था की इज़्ज़त-प्रतिष्ठा उनके कारोबार-व्यवहार के साथ जुड़ी होती है।

जहाँ लोगों को जरा सी भी अव्यवस्था, कारोबारी में गैरवर्तन या अन्धाधुन्ध व्यवहार की गन्ध आती है वहाँ लोग दान देने के लिए लाख दफ़ा सोचते हैं। इसलिए कारोबारी व्यवस्था तन्त्र अत्यन्त पारदर्शी, स्वच्छ एवं पवित्र रखें। इससे आप भी आपका मस्तक सदा गौरव से ऊँचा उठाकर चल सकेंगे।

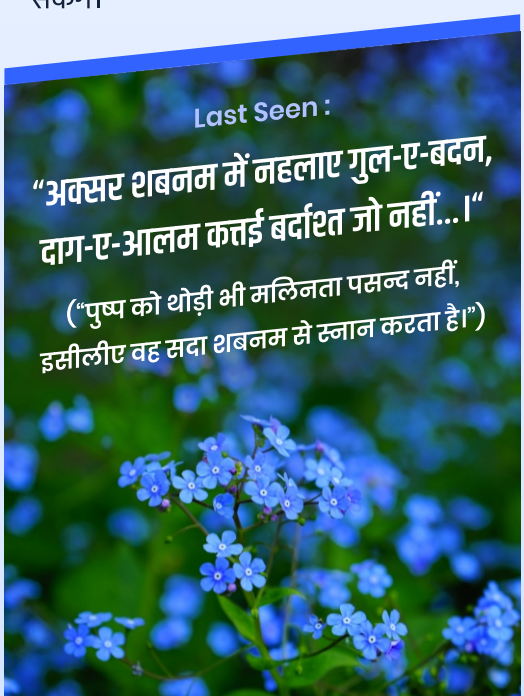

मेरी आचार-संहिता

पूज्य मुनिराज श्री तीर्थबोधि विजयजी म.सा.

नमस्ते मित्रों!

आप विद्यार्थी हो, तो परीक्षा में पास होना आपके लिए बहुत बड़ा चेलेन्ज है?

आप बिज़नेस मेन हो, आपके सामने कड़ी चुनौती है, टर्नओवर कैसे बढ़ाना?

आप डॉक्टर हो, तो मरीज़ को क्रिटीकल कंडीशन से बाहर लाना आपके सामने बड़ी चुनौती है?

आप CA हो, तो आपके सामने बड़ा प्रश्न है, कि क्लायन्ट के एकाउन्ट को क्लीयर कैसे करना?

परन्तु यह मत भूलिए कि सबसे पहले आप इन्सान हो। आपके सामने सबसे पहले यही बात अहमियत रखती है कि मेरी इन्सानियत को गिरते हुए कैसे बचाया जाए?

अगर गौर से देखा जाए, तो सरकार के सामने यह चुनौती है कि बढ़ती हुई पेट्रोल-डीज़ल की कीमत कैसे घटानी चाहिए, तो इन्सान की गिरती हुई नीयत कैसे ऊपर उठानी यह चुनौती धर्मगुरुओं के सामने है।

पारा (मरक्युरी) शायद पकड़ में आ सकता है, लेकिन आज इन्सान का संकीर्ण होता जा रहा चरित्र (केरेक्टर) समझ पाना, पकड़ पाना व उसे ऊपर उठाना सबसे ज्यादा मुश्किल होता जा रहा है।

आज सामान्यतः इन्सान का बौद्धिक स्तर खूब बढ़ा है। पहले आदमी भूल कर बैठता था, तो किसी के समझाने पर भूल को अपना भी लेता, एवं छोड़ भी देता था। परन्तु आज आदमी भूल करता है, और जब कोई उसे अपनी इस भूल के बारे में कुछ भी कहे तो वह इस बात का भरसक प्रयास करता है, कि वो गलत नहीं था। अपनी बुद्धि का इस तरह दुरुपयोग करता है।

ऐसे में किस को बोले? कैसे समझाए? किस तरह उनको अपनी जिन्दगी का विनाश करने से रोकें? इस समस्या का हल अच्छे-अच्छे धर्मगुरुओं और समाज के हितचिन्तकों के पास नहीं है।

चरित्र, केरेक्टर आज बहुत ही संकीर्ण और कॉम्प्लीकेटेड हो चुका है। जिन्हें पुरखों ने 'पाप' कहा था, वैसे कई आचार आज जीवन के भाग बन चुके है, उसमें बहुजन समाज को संभवतः कोई आपत्ति भी नहीं है, उस कार्य को भूल या पाप समझने का अहसास तक नहीं है।

जो भी हो, पर मुझे और आपको, हम सब को खुद अपनी एक चरित्र-सीमा और आचारसंहिता तय करनी चाहिए, "मैं इसको क्रोस नहीं करूंगा।"

जीवन सभी का भिन्न है, मन सभी का अलग है, संयोग और परिवेश सभी के अलग हैं – ऐसे में सभी के साथ एक सरीखे चरित्र की अपेक्षा कैसे रखी जा सकती है?

पर फिर भी इतना खयाल रखिए कि, अध्यात्म जगत में एक नियम है,

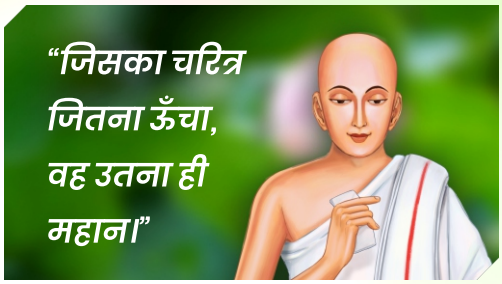

क्यों सृष्टि का चक्र भी संयमी मुनिवर की आज्ञा का पालन करता है?

क्यों देवी-देवता भी संयमी मुनिवर की सेवा में तैनात रहते हैं?

क्यों जैन-अजैन सभी मनुष्य संयमी के सामने झुक जाते हैं?

क्यों शिकारी खूंखार पशु भी संयमी के पास आकर शांत हो जाते हैं?

इन सभी का एक ही कारण है, संयमी मुनिवर का चारित्र सबसे ऊँचा होता है। इस संसार में सबसे श्रेष्ठ, उत्तमोत्तम और उत्कृष्ट जीवन है – संयम जीवन। संयमियों का चारित्र सबसे ऊँचा और सर्वश्रेष्ठ होता है। अंततः वे सर्वाधिक सम्मान के पात्र हैं।

ऐसे चारित्रधर को नमन करें, उनका स्मरण करें, उनके वचन सुनें, उनके पथ पर कभी हम भी चलें, और फिर हम भी प्रभु बनें। ऐसी शुभकामना के साथ आओ, इस गीत को गुनगुनाए।

।। चारित्र पद ।।

(पतझड़ सा ये मेरा जीवन)

संसार है बुरा सपना, संयम सुनहरा है;
अब छोड़ के मुझे सब कुछ, चारित्र ही पाना है,
संयमियों को नमन-नमन मेरे नमन
संयमियों को नमन, मेरे लाखों नमन... 1।।

संचित कर्मों को ये, चारित्र खाली कराए;
एक ही दिन में ये जीवन, मोक्षमंजिल दिलाए;
कैसे मिले संयम मुझको, मन में चले मंथन,
संसार में सबसे कठिन, सबसे महान जीवन...
संयमी... 2।।

पाप नहीं यहाँ कोई, ना कोई दोष की पीड़ा;
चारित्री नहीं देते, जीवों को थोड़ी भी पीड़ा;
चलते यूं ही बोले वैसा, जिसे कोई ना हो दुःखी,
उनके निकट जो भी आते, वे सर्वथा हो सुखी...
संयमी... 3।।

चारित्र देता मुक्ति, चारित्र प्रभु बनाता;
दुनिया के हर जीवों से, चारित्रधर का नाता;
सबका भला हो ऐसा ही, चारित्री का चिंतन,
जो सिद्धिपद पहुँचवा दे, ये ऐसा है इंजन...
संयमी... 4।।

कर भला तो हो भला।

पूज्य मुनिराज श्री कृपाशेखर विजयजी म.सा.

प्रत्येक जीव में अपनी आत्मा का दर्शन करने वाला व्यक्ति दूसरों के दुःख में किस हद तक विचलित हो सकता है, इसका 150 वर्ष पूर्व का एक प्रसंग जानने को मिला –

कच्छ-वागड़ में भरूड़ीया गाँव में रहने वाले एक श्रावक के घर के पास एक किसान रहता था। किसान स्वभाव से, सबसे अलग रहने वाला था, और पड़ोसियों से भी कम मिलता-झुलता था।

ग्रीष्म ऋतु में एक बार प्रातः काल में प्रसंगवश किसान सपरिवार किसी अन्य गाँव गया। शाम होने से पहले आ जाने का सोचा था, इसलिए अपने अलमस्त बैल को घर के आँगन में बाँधकर, थोड़ा घास देकर, घर को ताला लगाकर निकल गया। लेकिन किसी काम में फँस जाने के कारण वह किसान रात तक घर नहीं आ सका।

जैसे-जैसे समय बीता, वैसे-वैसे बैल की भूख-प्यास बढ़ती गई, और वह जोर-जोर से आवाज करने लगा। उसकी आवाज सुनकर श्रावक और उसका जवान बेटे ने आकर देखा तो, बैल अंदर था, और बाहर से घर को ताला लगा था। दोनों बहुत दुःखी हुए। आस-पास कहीं भी चाबी नहीं मिली। किसान कब वापस आयेगा, किसी को पता नहीं था।

जन्म से मिले हुए जीवदया के सुसंस्कारवश बैल को जिंदा रखने के – खिलाने के लिए वह युवक यहाँ से वहाँ दौड़-भाग कर प्रयत्न करने लगा। लेकिन किसान के घर में घुसने का कोई मार्ग नहीं दिखा। आखिर में बैल के दुःख से दुःखी होकर उस युवक ने भी खाना-पीना बंद कर दिया।

दो दिन का उपवास हो गया। तीसरे दिन किसान

घर आया। ताला खुलने की आवाज सुनकर युवक दौड़ता-दौड़ता आया और एक ही साँस में बोला –

"आपका बैल दो दिन से भूख-प्यास के कारण निरंतर चिल्ला रहा था। लेकिन कल से, दोपहर के बाद उसकी आवाज सुनने को नहीं मिली, शायद कुछ अनहोनी तो नहीं हो गई है ना?"

ताला खुलते ही जीवदया प्रेमी युवक दौड़कर अंदर गया। और देखा तो खूँटा टूट गया था और बैल मरण के शरण जा चुका था। वह युवक दुःखी होकर बिलख-बिलख कर रोने लगा। बहुत समय तक रोता रहा। फिर उसके माता-पिता उसे समझाकर घर लेकर गये। चौथे दिन पारणा कराया।

उसकी आँखों के सामने से बैल का दृश्य हट ही नहीं रहा था। जीवदया के इस अपूर्व राग से उसके हृदय में जोरदार वैराग्य प्रकट हुआ।

17 वर्ष की खिलती युवा उम्र में उसने स्थानकवासी संप्रदाय में दीक्षा स्वीकार की। बाद में सत्यज्ञान पाकर 'संवेगी' दीक्षा स्वीकार की और वे **'पू. पद्मविजयजी म.सा.'** के नाम से जगप्रसिद्ध हुए।

कच्छ-वागड़ के उपकारी गुरुवर्य पू. जितविजय-जी दादा के गुरुदेव ही पू.पद्मविजय म.सा. हैं!!!

जीवदया में निरंतर खेलने से सर्वोत्कृष्ट धर्म, अर्थात् संयम तो मिलता ही है, साथ-साथ दूसरे भी अनेक फायदे हैं –

1. दीर्घ आयु,
2. निरोगी काया,
3. लोकप्रियता,
4. हर जगह सफलता, और
5. जीवन में शांति मिलती है।

दुनिया का एक नियम है –

'जैसा दोगे वैसा पाओगे'।

जो दूसरे जीवों को शांति, प्रेम और प्रसन्नता देते हैं, उसे भी भरपूर शांति, प्रेम और प्रसन्नता मिलती ही है।

चलो, हम भी संकल्प करते हैं कि

'मेरी वाणी, व्यवहार और वर्तन से दूसरे के हृदय को घाव लगे, मैं ऐसी एक भी प्रवृत्ति नहीं करूँगा।'

Temper : A Terror – 10

पूज्य मुनिराज श्री शीलगुण विजयजी म.सा.

(नगर में फैली हुई "मारी" वह दूसरी कोई नहीं मगर खुद की बेटी राजकुमारी रत्नमंजरी है, ऐसी शंका राजा के मन-मस्तिष्क में जब हो चुकी थी। तब इस शंका के समाधान के लिए राजा अब क्या करते हैं? पढ़िए।)

चंदन जैसा शीतल पवन खंड के झरोखे से आ रहा था। राजा और मित्रानन्द एकदम गुमसुम से बैठे हुए थे।

"राजेश्वर! आप इस तरह गहरी चिन्ता से घिरे हुए क्यों लग रहे हैं? जो भी हो निवेदित कीजिए। मैं आपके लिए मेरे प्राण भी न्योछावर कर दूँगा।" मौन तोड़ने के लिए मित्रानन्द ने कहा।

राजा खंड में एकदम शांत दबे पाँव आये थे। उसके चेहरे पर अकथ्य वेदना दिख रही थी। मित्रानन्द ने राजा को सांत्वना देने का सोचा था, पर राजाओं के प्रकोप को वह जानता था, इसलिए मौन रहना ही उसे उचित लगा।

दो घड़ी तक मौन का प्रसार रहा। किन्तु अब मित्रानन्द का धैर्य टूट गया था। अब वह बिना कुछ कहे नहीं रह सकता था।

"मित्रानन्द! मैं क्याँ कहूँ?" राजा के प्रत्येक शब्द में असह्य वेदना थी। "मेरा ही सिक्का खोटा है। 'मारी' मेरे घर में ही है।" मित्रानन्द की आँखों में राजा को आश्चर्य दिखा।

"सच में?... कौन है वो?" मित्रानन्द ने एक साँस में पूछा।

"रत्नमंजरी..." एक शाब्दिक जवाब मित्रानन्द ने सुना। उसे विश्वास नहीं हो रहा था। "क्या बोले?" कुछ समझ ही नहीं आ रहा था।

"राजेश्वर! आपने बराबर जाँच-पड़ताल तो की है ना?" मित्रानन्द ने कुछ आशा दिखाने का प्रयास किया।"

"उसमें संदेह का जरा भी अवकाश नहीं है।"

"तो? अब?"

राजा अपने स्थान से खड़े हो गये। दंतकथाओं में सुने हुए पराक्रमी पुरुषों के चेहरे पर दिखाई देने वाला अटल निश्चय मित्रानन्द को दिखा।

"उसका निग्रह कर।" एक पिता के लिए असम्भव शब्द निकले।

रत्नपेटी की तरह मित्रानन्द ने दरवाजे बराबर बंद कर दिए। राजा ने मित्रानन्द को रत्नमंजरी के खंड में स्वेच्छा से जाने की इजाजत दी थी। राजा की एक ही माँग थी।

"यह मेरी कुल को कलंक देने वाली बेटी-रत्नमंजरी का तुम किसी भी प्रकार से निग्रह करो, वरना देखते ही देखते वह आधे नगर को मार डालेगी। मेरे कुल को अब और ज्यादा कलंकित होने से बचा लो।"

मित्रानन्द ने यह चुनौती स्वीकार कर ली। पर उसने शर्त रखी थी कि, "मैं पहले देखूँगा कि वह 'मारी' साध्य है या असाध्य और फिर ही उसका उपाय कर सकूँगा।" राजा ने मित्रानन्द को संपूर्ण छूट दी थी।

मित्रानन्द खंड के भीतर गया। रत्नमंजरी आसन पर बैठकर कुछ पढ़ रही थी। पैरो की आवाज होने पर रत्नमंजरी ने ऊपर देखा। रत्नमंजरी ने मित्रानन्द को पहचान लिया। वो खड़ी हो गई।

मित्रानन्द के सामने अनिमेष नजरों से देखते हुए उसने अपने निकट पड़ा आसन रखा। मित्रानन्द उसके सामने बैठा, रत्नमंजरी ने सर नीचे झुकाया।

"रत्नमंजरी!" मित्रानन्द के मुँह से निकले हुए शब्द को चातक के जैसे रत्नमंजरी पी रही थी। "मैंने तुझे तेरे घर में ही कलंक दिलाया है..." क्या प्रतिक्रिया होती है, यह देखने के लिए मित्रानन्द रत्नमंजरी को देखता रहा। वह तल्लीन होकर सुन ही रही थी।

"इसलिए, अब तेरा यहा रहना असम्भव है, पर तू चिन्ता मत कर, मैं तुझे तेरे सुख के स्थान पर ले जाऊँगा।" प्रेमपूर्ण अँखियों से रत्नमंजरी मित्रानन्द को देखती ही रही।

"प्राणप्रिय! मेरे प्राण आपको समर्पित हैं। आप मेरे साथ जो चाहें वो कर सकते हैं।" रत्नमंजरी ने हल्का सा स्मित किया।

रत्नमंजरी को देखकर मित्रानन्द को कहीं पढ़ी हुई नीतिशास्त्र की पंक्तियाँ अपने मन में उजागर हुई।

"अन्धो नरपतेश्चितं व्याख्यानं महिला जलम्।
तत्रैतानि हि गच्छान्ति नीयन्ते यत्र शिक्षकै:।।"

काजल जैसी काली परछाइयाँ दीवारों पर नाच रही थी। पूरा गुप्तखंड दिये की रोशनी से उद्योतीत था।

"राजेश्वर! मुझे 'मारी' तो साध्य लगती है, पर वो बहुत ताकतवर मारी है। उसे संपूर्ण खत्म करने की शक्ति तो मेरे गुरुमंत्र में भी नहीं है।" राजा के मुख पर मित्रानन्द की बाते सुनकर चिन्ता की लकीरें खींच गई।

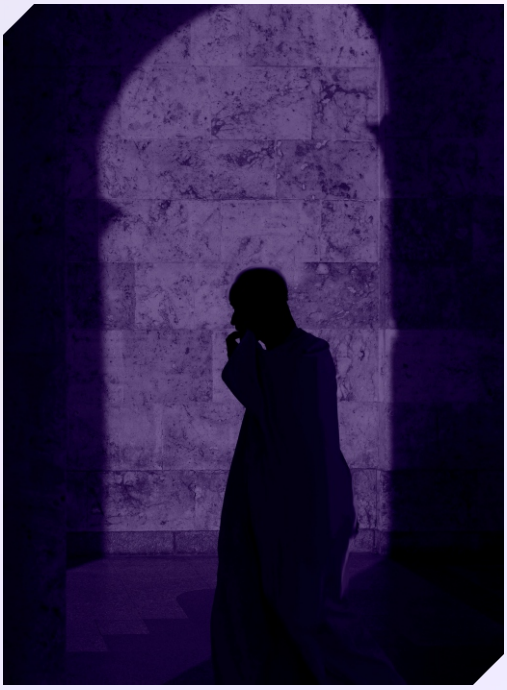

"तो? क्या हो सकता है उसका?" राजा की आवाज में डर महसूस हुआ।

"राजेश्वर! आपको घबराने की ज़रूरत नहीं है।"

मित्रानन्द ने बोल तो दिया, पर किस तरह, यह तो उसे भी सोचना बाकी था। किसी महासंकट में फँस गया हो, ऐसे भाव उसके चेहरे पर थे। उसकी स्थिति विकट हो गई थी।

एक भी शब्द बोले बिना एक घड़ी बीत गई। "राजेश्वर!" शब्द सुनते ही राजा के चेहरे पर आशा की एक किरण नज़र आई।

"मुझे एक उपाय सूझा है। आप कहें तो मैं प्रस्तावित करूं" राजा सुनने के लिए अपने सिंहासन पर आगे आया।

"राजेश्वर!" फिर से एकदम धीरे से मित्रानन्द ने कहा, "मेरे गुरुजी की मुझे एक बात याद आ रही है, एक विशिष्ट प्रक्रिया और विधि की बात उसमें थी।"

"क्या थी वो?" उत्सुकता के साथ राजा ने पूछा। "राजन्! उसमें 'मारी' को रात्रि के समय में सरसों से वश में करना पड़ेगा और उसे रात्रि को ही उस स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना पड़ेगा। जैसे ही सुबह होगी, वो वहीं पर रुक जाएगी। इसलिए आपत्ति यह है कि, आपका राज्य बहुत बड़ा है, और मेरे पास जो वाहन है, वो..."

"आप चिन्ता मत करो, आपके गमन के लिए मैं मेरे राज्य की सबसे वेगवान सांडणियाँ आपको दे दूँगा।" बीच में ही राजा ने कह दिया। मित्रानन्द के चेहरे पर राहत के भाव दिखे। राजा को भी तसल्ली हुई। मित्रानन्द अपने मन ही मन खुश हो गया। उसका कार्य अच्छी तरह से पार पड़ गया था।

बिफरी हुई नागिन की तरह रत्नमंजरी फुंकार कर रही थी। राजा उसके पास गया। वह आक्रमक हो गयी। राजा दो कदम पीछे हट गया।

राजा! जिसके कुल में 'मारी' हो, उसी कुल वाले व्यक्ति को ही उसका तिरस्कार करके बाहर निकालना पड़ेगा, नहीं तो वह उसे अपना स्थान समझकर वहीं फिर से आ जायेगी।" मित्रानन्द के शब्द राजा के मस्तिष्क में गूंजने लगे।

राजा ने अपना सत्व एकत्रित किया। और रत्न-मंजरी पर लपटा। वो उसके सामने फुंकार रही थी, पर राजा ने उसे बालों से पकड़कर फटाफट बाजू में खड़े मित्रानन्द को सौंप दिया। मित्रानन्द ने कुछ मंत्र पढ़े, लेकिन वह और उग्र होती गई। मित्रानन्द सरसों के दाने डालता हुआ उल्टी चाल चलता जा रहा था।

बाहर सांडणियों को एकदम सुसज्जित करके रखा गया था। उन्हें पर्याप्त घास-चारा खिला दिया गया था।

एक सांडणी के ऊपर राजा बैठ गया। एक के उपर मित्रानन्द ने फुंकार कर रही मारी को बांध दिया। और तीसरी सांडणी के ऊपर अपना सामान लादकर उसे हुंकार दिया। मारी की सांडणी आगे दौड़ रही थी, पीछे राजा और मित्रानन्द की दौड़ रही थी।

सुबह होने में मात्र एक प्रहर बाकी था। राज्य के राजमार्ग को पार करके वे नगर के दरवाजे की और मुड़े। वहाँ चौकीदार तैयार खड़े थे।

"दरवाजा खोलो" राजा की आवाज सुनकर चौकी-दार ने फटाफट दरवाजा खोल दिया। रत्नमंजरी राजकुमारी को इस तरह बंधा हुआ देखकर चौकीदार को आश्चर्य हुआ।

"किसी को भी यह बात बताई, तो देख लेना..." राजा ने चौकीदारों से कहा।

"मित्रानन्द! इस राज्य पर तूने जो उपकार किया है वो मैं कभी नहीं भूल सकता। इसका तुझे जो उचित लगे वो करना। और मेरी सीमा से इसे जल्दी से दूर कर देना।"

राजा ने अपने कलेजे के टुकड़े जैसी रत्नमंजरी की ओर आखिरी बार देखा। उसकी आँखें आँसू से भर आयी।

"मित्रानन्दने सांडणियों को दौड़ाया। पीछे का दरवाजा मित्रानन्द की सूचना के अनुसार राजा ने बंद किया।

मित्रानन्द ने रत्नमंजरी के बंधन खोल दिये।

"माफ करना माते! आपको कष्ट दिया..." मित्रानन्द के हृदय में रत्नमंजरी के प्रति भक्तिभाव के अद्भुत भाव छलक गये।

(क्रमशः)

LEARNING
MAKES A MAN
PERFECT

VISIT US
www.faithbook.in
FaithbookOnline

- "Faithbook" नॉलेज बुक में साहित्यिक, धार्मिक एवं मानवीय सम्बन्धों को उजागर करने वाली कृतियों को स्थान दिया जाता है। ऐसी कृतियाँ आप भी भेज सकते हैं। चुनी हुई कृतियों को "Faithbook" नॉलेज बुक में स्थान दिया जाएगा।
- प्रकाशित लेख एवं विचारों से "Faithbook" के चयनकर्ता, प्रकाशक, निदेशक या सम्पादक सहमत हों, यह आवश्यक नहीं है।
- इस Faithbook नॉलेज बुक में वीतराग प्रभु की आज्ञा विरुद्ध का प्रकाशन हुआ हो तो अंतःकरण से त्रिविध त्रिविध मिच्छामि दुक्कडम्।

SAYYAM GRAPHICS
80878 75828 | 92704 56160